भाषा और कौशल विकास

डॉ0 ऋतु भारद्वाज
प्रोफेसर, बी0आई0एम0टी0 मेरठ

सार

मानव जाति निरन्तर विकास की ओर अग्रसर है। ऐसी कौन सी शक्ति है जो मानव जाति को उननति के शिखर पर पहुँचने के लिए प्रेरित करती है। इस प्रश्न का उत्तर मात्र एक ही है, और वह है–भाषा। अपने पूर्वजों के विचार भाव एवं अनुभवों को संचित करके अपनी आने वाली पीढ़ी को भाषा के माध्यम से मानव ने सौंप दिया।

प्रस्तावना

समस्त ज्ञान हो अविा विज्ञान भाषा के माध्यम से ही सुरक्षित हे। भाषा विकास की आधारशिला है। भाषा की दृष्टि से जितना जितना अच्छा और समृद्ध वातावरण मिलेगा उतनी ही अच्छी और समृद्ध भाषा होगी। भाषा भौतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सभी दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। भौतिक रूप से यह ध्वनियों का समूह मात्र है, जो किसी न किसी अर्थ की प्रतीति कराती है। सामाजिक रूप से भाषा एक दूसरे से मिलकर रहना सिखाती है।सांस्कृतिक रूप से भाषा को एक परम्परा से प्राप्त करते हैं। सांस्कृतिक उपलब्धियों के समान ही भाषा में फरे–बदल होता रहता है, उसी प्रकार भाषा में भी परिवव्रन होता रहता है। भौगोलिक स्थिति, आयु, व्यवसाय, सामाजिक स्तर जेसी बातें भाषा को प्रभावित करती हैं यहाँ तक कि स्त्री एवं पुरूष की भाषा में भी अन्तर होता है। अतः कहा जा सकता है कि भाषा एक, गतिशील तत्व है।

भाषा को विद्वानों ने सांकेतिक साधन भी कहा है। जब तक भाषा का आविष्कार नहीं हुआ था हम आंगिक संकेतों का आश्रय लेकर ही अपने विचारों की अभिव्यक्ति करते थे। अभिव्यक्ति के लिए विभिन्न प्रकार की ध्वनि भी इसी श्रेणी में आती है। प्रकृति भी अपनी अभिव्यक्ति मुरझाकर, लहलहाकर एवं सूखकर या क्षीण होकर स्थिर होकर (अर्थात् जड़ एवं चेतन भी) देते हैं।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भाषा का महत्व और भी बढ़ गया है क्योंकि यह संस्कृति और सभ्यता की रक्षा के लिए, शिक्षा एवं साहित्य निर्माण के लिए, तर्क–विर्तक एवं चिन्तन के लिए, सामाजिक रूप से सुखी जीवन यापन के लिए एक नवीन मार्ग का निर्माण करती हैं

भाषा का विकास–भाषा विकास के विद्वानों ने चार चरण बताए हैं। धातु, प्रत्यय, विभक्ति ओर समास। शब्द सर्वप्रथम धातु रूप में था। प्रत्यय अवस्था के अतिरेक से विभक्ति का जन्म हुआ और

विभक्ति का अतिरेक समस्त शब्द में मिलता हैं। भाषा के दो रूपों बाहय और आभ्यान्तर में दोनों का सम्बन्ध शब्द और अर्थ से है। भाषा के बाध्य रूप में विकास अनेक प्रकार से होता है जैसे–वर्ण विकार अर्थात् उच्चारण सम्बन्धी परिवत्रन। शब्द द्वैधीभाव अर्थात् किसी भाषा का एक शब्द विकृत या परिवर्तित होता–होता दो या अधिक रूपों को धरण कर लेता है तथा वे शब्द फिर स्वतन्त्र शब्द मान लिये जाते हैं। उनका मौलिक रूप स्पष्ट नहीं होता।

नवीन शब्दों का आदान–प्रदान एवं नवीन शब्द निर्माण भी भाषा के विकास की एक कड़ी है। इसके अतिरिक्त अनेक शब्द संश्लेषण अर्थात् अनेक शब्द मिलकर एक नया शब्द बनाते हैं प्राचीन शब्दों का अप्रयोग, जोकि प्राचीन हैं किन्तु बुद्धि की भाषा में नहीं मिलते, यदि मिलते भी हैं तो बदले हुए अर्थ में प्राप्त होते हैं।

भाषा के माध्यम से विकास के सन्दर्भ में यह विचार–विनिमय का सरलतम साधन हैं। मानव वाणी द्वारा अथवा लिखित रूप में अपने विचारों की अभिव्यक्ति करता है तथा दूसरे के विचारों को सुनकर या पढ़कर आत्मसात् करता है क्योंकि जीवन में भावों का प्रकटीकरण अथवा प्रकाशन एवं ग्रहण दोनों ही अनिवार्य हैं। सरल शब्दों में कह सकते हैं कि भाषा प्रयोग की असमर्थता में बालक बुद्धिहीन हो सकता है। भाषा सृजनशीलता में भी सहायक है। साहित्यिक अभिव्यक्ति के क्षेत्र में साहित्यकार भाव, विचार, कल्पना शैली, छंद, भेद, रूपान्तर, भाषा–विकास जैसे तथ्यों को ध्यान में रखकर साहित्य रचना करता है। यही रचना एक प्रकार का कौशल है। कौशल भाषा–शिक्षण में चार कहे गए हैं–सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लेखन करना। कहा जाता है कि एक अच्छा वक्ता होना सरल है किन्तु एक अच्छा श्रोता होना अत्यन्त कठिन है। सुनी हुई बातों का हमारे मन–मस्तिष्क पर विशेष प्रभाव पड़ता है। वाणी में उसका प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। जैसी बोली बालक परिवार में सुनता है उसी का तद्नुरूप अनुकरण भी करता है। श्रवण कौशल से बालक की मानसिक एवं बौद्धिक शक्ति का मौलिकता एवं वक्ता के मनोभावों को समझने की निपुणता उत्पन्न होती है। वह अभिव्यक्ति के ढंग को समझता है। श्रवण कौशल के विकास से ही उसके व्यवहार में परिवर्तन आता है। श्रवण कौशल यही है कि सुनने के साथ उसका अर्थ भी ग्रहण किया जाए। श्रोता में मूल ध्वनियों एवं ध्वनि समूहों में अन्तर करने की योग्यता होनी चाहिए। श्रवण कौशल तथा भाषण–कौशल का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है, अर्थात् किसी भी भाषा को स्पष्ट रूप से सुनना या ग्रहण करना सीख लेने पर ही उस भाषा का उच्चारण या अभिव्यक्ति सम्भव है। श्रवण कौशल जितना अच्छा विकसित होगा, भाषण–कौशल भी उतना ही अच्छा विकति हो जाएगा। श्रवण–कौशल विकसित करने की प्रक्रिया के दो मुख्य अंग हैं–प्रथम सामान्य श्रवण, द्वितीय चयनात्मक श्रवण। सामान्य श्रवण कौशल का विकास करने के लिए अध्येता में सामान्य श्रवण की कुशलता का विकास करना

आवश्यक है। तात्पर्य है कि अध्येय भाषा अथवा सामग्री को सामान्य रूप से सुनना। सामान्य श्रवण का मुख्य आधार पर्याप्त, शान्त चित्त होकर श्रवण करना है। पर्याप्त श्रवण से तात्पर्य बहुत देर तक, बहुत सी बातों को श्रवण करना। श्रवण की अधिक मात्रा से उस भाषा की ध्वनि व्यवस्था का प्रभाव श्रोता के मस्तिष्क पर पड़ते रहने के कारण उसमें शनैः–शनैः उस भाषा की ध्वनियों को पहचानने की शक्ति का स्वतः ही विकास होता रहता है। पर्याप्त श्रवण के लिए भाषा भाषी (अर्थात् उस भाषा का भाषण करने से है) व्यक्तियों के भाषण का आयोजन करना, रेडियो ट्रांजिस्टर पर विविध कार्यक्रमों को सुनने की व्यवस्था करना, विविध भाषणों एवं कार्यक्रमों को रिकार्ड करके सुनाना, नाटकों का आयोजन करना एवं आरम्भ से ही आवश्यक सूचनाएं तत्सम्बन्धी भाषा में देना तथा तत्सम्बन्धी भाषा का श्रवण–भाषण का वातावरण बनाये रखना जैसे उपाय अपनाये जा सकते हैं।

कौशल विकास–कोई भी भाषा सीखने–सिखाने में वातावरण और साधनों का पर्याप्त महत्व होता है। श्रवण कौशल विकसित करने के लिए अध्यापक को मातृभाषा तथा द्वितीय भाषा अर्थात् परिशिष्ठ भाषा या क्षेत्रीय बोली की ध्वनि व्यवस्था की तुलना करने के बाद भिन्न ध्वनियों के श्रवण का अभ्यास कराता है। यह अभ्यास एक–एक पाठ्यबिन्दु का चयन करके कराया जाता है। कुछ ध्वनियों की उच्चारण प्रक्रिया भिन्न एवं समान होती है। ऐसी स्थिति में अध्यापक स्वयं उच्चारण करते हुए छात्रों को अवगत कराता है। व्याकरणीय रूपों का श्रवण सन्दर्भ वाक्यों का श्रवण कराके छात्र पुनः पुनः अथवा बारम्बारता से सुनने से छात्र स्वयं ही अर्थ बोध ग्रहण कर लेते हैं। श्रवण–कौशल विकास के अन्तर्गत अभ्यास के अतिरिक्त भाषा शिक्षण की आरम्भिक स्थिति में ही नहीं अपितु भाषा के अन्य कौशलों के शिक्षण के समय भी परोक्ष रूप से होता है। जैसे–उच्चारण, भाषण–शिक्षण के समय, श्रेत लेखन के समय श्रवण तथा लेख की क्रियाएँ साथ–साथ चलती है। अतः श्रवण कौशल विकास को भाषा–शिक्षण के आरम्भ के कुछ समय तक ही एकांगी रूप में देखा जा सकता है। अध्यापक को चाहिए कि वह बालक को श्रवण कौशल में निपुण बनाने के लिए मौखिक कार्य को प्रोत्साहन दे, कक्षा में स्वस्थ अनुशासन एवं नियन्त्रण बनाये रखे, क्लिष्ट पाठ्यवस्तु को रोचक बनाए तथा एक समय में एक ही काम करने दें। यदि ऐसा होगा तभी बालक श्रवण के साथ उच्चारण एवं वर्तनी सम्बन्धी दोष से मुक्त रहेगा तथा उसकी वाचन तथा अभिव्यक्ति क्षमता को भी बल मिलेगा।

शुद्ध उच्चारण भाषा में एकरूपता लाता है, उसे व्यवस्थित रखता है। भाषा के शुद्ध ज्ञान के लिए शुद्ध उच्चारण आवश्यक हैं। अशुद्ध उच्चारण के अनेक कारण हो सकते हैं। किन्तु उचित मार्ग निर्देशन द्वारा अधिकांश त्रुटियों का निराकरण किया जा सकता है। यह उपचार परम्परागत एवं वैज्ञानिक के माध्यम से सम्भव है। यदि वाचन अशुद्ध होगा या उच्चारण अशुद्ध होगा तोलेखन भी अशुद्ध ही होगा।

प्रारम्भिक कक्षा से ही उच्चारण सुधारने का प्रयास किया जाना चाहिए। बालकों में अनुकरण की प्रवृत्ति तीव्र रूप में पायी जाती है, इसलिए समय–समय पर उनका सम्पर्क अच्छे वक्ताओं से कराना चाहिए, जिससे कि वे स्वाभाविक रूप से शुद्ध उच्चारण कर सकें।

बात आती है पठन अथवा वाचन की। बालक प्रथमतः बोलना सीखता है पश्चात् पढ़ना। भाषा शिक्षण में पठन का अत्यधिक महत्व है। जब हमें लिखित बात स्वयं पढ़नी होती है अथवा किसी को वह बात पढ़कर सुनानी होती है तो उस बात को प्रवाहपूर्ण, शुद्ध उच्चारण के साथ मुधर वाणी में पढ़ने का प्रयास करते हैं। इस रीति से लिखित सामग्री का पढ़ना ही भाषा में वाचन कहलाता है। कभी–कभी लिखित सामग्री को मन ही मन पढ़ना मौन वाचन की संज्ञा से विीूषित होता है। अतः वाचन में लिपि का पढ़ना ही आवश्यक नहीं, अपितु पढ़कर अर्थग्रहण करना भी आवश्यक है। वाचन शक्ति हमें गम्भीर अध्ययन के लिए प्रेरित करती है। वाचन ज्ञान का स्रोत है। वाचन को वातावरण, शारीरिक अवस्था अनुभव, मनोभाव, शब्दावली, मानसिक विकास जैसे तत्व प्रभावित करते हैं। वाचन एक कला है। इस कला में बालक स्वयं के प्रयत्न से ही कुशल बनता है। यह वाचन का महत्वपूर्ण सिद्धान्त है जिसमें बालक की अभिरूचि को सजग किया जा सके, ऐसे विषयों के पाठन–पठन से बालक उत्सुकता से सीखेगा क्योंकि किसी भी भाषा को सीखने की पहली शर्त है–उस भाषा को श्रवण करना तथा दूसरी–उस भाषा में सम्प्रेषण का चरम विकास करना वाचन के तीन मुख्य आधार सस्वरता, भाव–ग्रहणीयता एवं वाचन गति कहे गए हैं। वाचन को कौशल बनाने के लिए उसमें प्रभावशीलता, स्पष्टता एवं उचित स्वर प्रक्षेपण भी होना चाहिए। भावानुसार ही आरोह–अवरोह का ध्यान रखते हुए इस प्रकार वाचन किया जाना चाहिए कि प्रतीत हो कि वास्तव में अध्यापक ने छात्र को एक कौशल में कुशल बनाया है।

अभिव्यक्ति भी एक भाषायी कौशल है। जन्म के पश्चात् बालक श्रवण सीखता है, पश्चात् वाचन तदोपरान्त पढ़ना व लिखना सीखता है। बालक को मौखिक अभिव्यक्ति के विकास को ही प्राथमिकता देनी चाहिए। मौखिक अभिव्यक्ति के तीन साधन हैं–संकेत, उच्चारण और लेखन। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी बालक अधिकांश बातें अनुकरण द्वारा ही सीखते हैं और मौखिक अभिव्यक्ति अनुकरण प्रधान होती है। व्यवहारिक जीवन में मौखिक भाषा का जितना प्रयोग होता है। उतना लिखित भाषा का नहीं। बहुत सी बातें मौखिक अभिव्यक्ति के द्वारा जितनी स्पष्ट हो जाती है उतनी लिखित भाषा द्वारा नहीं।

बालक को अभिव्यक्ति के क्षेत्र में कुशल बनाने के लिए अध्यापक का वाचन के साथ–साथ उच्चारण भी शुद्ध होना चाहिए। शिक्षक की त्रुटियों का बालक पर सीधा प्रभाव पड़ता है। अतः शिक्षक को अवस्था अनुसार समय एवं परिस्थितियों के अनुकूल विधियों का प्रयोग करते हुए, बालक की

अभिव्यक्ति कला को पुष्ट करना चाहिए। जिस प्रकार भाषा का सुनना, बोलना, पढ़ना महत्व रखता है उसी प्रकार लिखने का भी महत्व है। बालकों को लेखन में कुशल बनाने के लिए लेखन सम्बन्धी जिज्ञासा उत्पन्न करना आवश्यक है। शिक्षक को बालक की क्रियाशीलता को प्रोत्साहित करना चाहिए। आज जब शिक्षा बाल केन्द्रित है तब हमें बालक की प्रत्येक गतिविधि को रचनात्मकता देते हुए, किसी एक कौशल में निपुण बनाना चाहिए। समय परिवर्तित हो रहा है ऐसे में, बालक को किसी न किसी क्षेत्र में कुशल होना ही होगा अन्यथा तेजी से बदलती इस परिस्थिति में वह वहीं स्थिर होकर रह जाएगा।

वर्तमान युग तकनीकी युग है। भारत जैसे विकासशील देश में, प्रत्येक युग में स्थिति बदलती रही है। एक समय था जब बालक को अक्षर ज्ञान कराने के लिए काष्ठ–पट्टिका का आश्रय लिया जाता था, बालक विभिन्न प्रकार के यत्न करके उसे लिखने योग्य बनाता था, उस समय हस्त लेखन में बालक कुशल होता था, धीरे7धीरे समय बदला उस काष्ठ–पट्टिका का स्थान पेंसिल एवं कॉपी ने लिया, पुनः पुनः लेखन प्रारम्भ हुआ किन्तु सभी छात्र कुशल नहीं हो पाते। इसका एक कारण यह भी है कि प्रत्येक बालक का व्यक्तित्व अलग होता है। बाल केन्द्रित शिक्षा के अन्तर्गत शिक्षा के विभिन्न आयाम आये, जहाँ बालक अपनी रूचि, बुद्धिलब्धि, क्षमता एवं अभिवृत्ति के अनुसार शिक्षा ग्रहण करता है और किसी एक क्षेत्र में कुशलता प्राप्त करके देश को आगे बढ़ाने में अपना सहयोग देता है। वह अपनी अभिव्यक्ति उस कौशल के साथ व्यक्त करता है जिसे उसने तन्मयता से सुना, बोला और लिखा, लिखकर उपाधि प्राप्त की एवं उस उपाधि का उपयोग सफलता के रूप में परिवर्तित किया।

वर्तमान सन्दर्भ में देखा जाए तो यही भाषायी कौशल प्रत्येक क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्शाते हैं क्योंकि बालक अपनी रूचि से कुछ भी सीखेगा–परिणाम तो कुशलता ही होगी और यही कुशलता, उसका कौशल स्वयं की, समाज की एवं देश की सफलता है। आज जब प्रत्येक क्षेत्र में सभी को, सरकारी निकायों में रोजगार मिलना असम्भव हो रहा है तथा निजी क्षेत्रों में भी रोजगार की गारंटी समाप्त प्रायः होती जा रही है। ऐसे में कुशल युवा को यह सब समस्या विचलित नहीं करती क्योंकि उसके पास श्रवण, वाचन एवं अभिव्यक्ति जैसे कौशल की निपुणता है। रोजगार कोई भी हो, निकाय कोई भी हो, सभी क्षेत्रों में कुशलता के लिए उससे सम्बन्धित जानकारी प्राप्ति के लिए तत्सम्बन्धी शिक्षा को सुनकर ग्रहण करना ही प्रथम सोपान है। महात्मा गांधी जी का 3R का फार्मूला भी इसी का परिचायक है। वह यही चाहते थे कि प्रत्येक युवा हुनरमंद अर्थात् कुशल अर्थात् कौशल प्रधान युवा हो। तभी उनकी इस विचारधारा को प्राथमिक स्तर से ही लागू किया गया क्योंकि प्राथमिक स्तर बालक की अधिक ग्रहण क्षमता का स्तर कही जाती है और आज स्वतः ही ऐसी स्थिति बन गई है। सम्भवतः इसी आशय को समझते हुए माननीय प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने आज स्टार्ट अप एवं कौशल विकास जैसी

योजनायें देकर प्रत्येक युवा के हाथ कौशल पूर्ण बनाकर आगे बढ़ने के अवसर खोज कर दिए हैं। कौशल कोई भी हो भाषा का स्थान प्रमुख ही रहा है। जिस भाषा में बालक अधिक से अधिक सीख सके उसी भाषा में उसे ज्ञान दिया जाना चाहिए, तभी परिवर्तन तीव्रगति प्राप्त करता है। ऐसा नहीं कि हम अपनी मातृभाषा हिन्दी के साथ नहीं बढ़ सकते या किसी क्षेत्र में कुशलता नहीं प्राप्त कर सकते, नहीं अपितु हम अधिक ज्ञानार्जन करके (अपनी भाषा द्वारा) बुलन्दी छू सकते हैं।

खेल जगत हो या मनोरंजन जगत, उद्यमिता हो कोई अन्य क्षेत्र ऐसे बहुत से व्यक्ति हैं जो अपनी मातृभाषा को ही प्रयोग करते हैं और अपने क्षेत्र में सफलतम व्यक्तियों में गिने जाते हैं। यह भाषायी कौशल ही है जो उन्हें अधिक ज्ञानार्जन के लिए प्रेरित करता है। अतः शिक्षक का अभिभावक दोनों का कर्त्तव्य है कि वह बालक को उसकी रूचि के अनुरूप अधिक से अधिक सिखाने का प्रयास करें, मनोवैज्ञानिक विधियों का आश्रय लेते हुए उसे आगे बढ़ाने में अपना सहयोग करें यदि बालक अधिक सीखेगा एवं सीखकर उसे व्यवहार में लायेगा तो मान–सम्मान के भागीदार तो भी दोनों ही होंगें। परिणामतः एक स्वस्थ एवं सफल नागरिक के साथ एक उन्नत समाज एवं देश का निर्माण होगा, तभी तो हमारा देश 'विश्व गुरू' बनेगा, तो आइए मिलकर इस गुरू–शिष्य की कर्मठ परम्परा का शुभारम्भ करें, अपने–अपने कर्त्तव्य को मूर्त रूप प्रदान करें।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. हिन्दी भाषा शिक्षण, भाई योगेन्द्र जीत, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
2. हिन्दी शिक्षण, डॉ0 अमरिन्दर कुमार सिंह, श्री कविता प्रकाशन, जयपुर।
3. योजना पत्रिका